संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ नई पीढ़ी के लिये विशेष भेंट -

श्री तत्त्वार्थ सूत्र

पद्यानुवाद

मंगलाचरण

(हरिगीत)

हे मुक्ति पथ नायक-महा, तुम जानते सब सृष्टि को ।
हे कर्म-गिरि भेदक नमूँ मैं, तव गुणों की प्राप्ति हो ॥

अध्याय-1

(वीर छन्द)

सूत्र क्रमांक

(1-5)

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित ही एक मात्र शिवपुर का पंथ ।
तत्त्वार्थों की श्रद्धा समकित अधिगम से या होय स्वयम् ॥
जीव अजीव आस्रव बन्ध-रु संवर निर्जर मोक्ष सुतत्त्व ।
नाम स्थापन द्रव्य भाव से ये सब होते हैं वक्तव्य ॥1॥

(6-8)

नय-प्रमाण एवं निर्देश तथा स्वामित्व-रु साधन से ।
काल और आधार तथा भेदों से ये जाने जाते ॥
सत् संख्या अरु क्षेत्र स्पर्शन काल और अन्तर से जान ।
भाव और हीनाधिकता से होता है तत्त्वों का ज्ञान ॥2॥

(9-14)

मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्यय अरु केवल- ये हैं ज्ञान प्रमाण ।
मति-श्रुत दोनों हैं परोक्ष अरु शेष तीन प्रत्यक्ष सुजान ॥
मति-स्मृति-संज्ञा-चिन्ता अरु अभिनिबोध जानो मतिज्ञान ।
मन अरु इन्द्रिय के निमित्त से भी हो जाता है मतिज्ञान ॥3॥

(15-19)

अवग्रह ईहा अवाय धारणा- इस क्रम से होता मतिज्ञान ।
बहु बहुविध अरु शीघ्र अप्रगट अकथित ध्रुव वस्तु का ज्ञान-
इन सबके प्रतिपक्ष स्वरूपी सब मिल बारह भेद पदार्थ ।
अप्रगट का हो मात्र अवग्रह चक्षु और मन से नहिं ज्ञात ॥4॥

(20-23)

मतिपूर्वक ही श्रुत होता है दो अनेक अरु बारह भेद ।
सुर-नारक के अवधिज्ञान में भव ही कारण कहें जिनेश ।
नर-तिर्यन्चों को क्षयोपशम से होता छह भेदों युक्त ।
ऋजुमति और विपुलमति दो हैं मनपर्यय के भेद सुयुक्त ॥5॥

(24-28)

सुविशुद्धि अरु अप्रतिपाती की विशेषता है इनमें ।
क्षेत्र विशुद्धि स्वामी अरु विषय अपेक्षा भिन्न कहे दोनों ॥
कुछ पर्यायों सहित सभी द्रव्यों को जाने मति-श्रुतज्ञान ।
अवधिज्ञानरूपी को जाने भाग अनन्ता चौथाज्ञान ॥6॥

(29-32)

सकल द्रव्य-गुण-पर्यायों को विषय बनाता केवलज्ञान।
एक जीव को एक साथ हो सकें एक दो त्रय चौ ज्ञान॥
मतिश्रुत अवधि विपर्यय भी हैं मानें असत् और सत् एक।
मनमानी से ग्रहण करें उन्मत्त समान लहें बहु खेद॥7॥

(हरिगीत)

नैगम तथा संग्रह सहित व्यवहार अरु ऋजुसूत्र नय।
शब्द समभिरूढ एवंभूत जानो सप्त नय॥

****

अध्याय - 2

(1-4)

उपशम क्षायिक मिश्र और औदयिक पारिणामिक निज भाव॥
क्रमशः दो नौ भेद अठारह एकबीस त्रय चेतन भाव॥
उपशम के समकित चारित द्वय क्षायिक के हैं दर्शन ज्ञान-
दान लाभ भोगोपभोग बल समकित चारित भेद सुजान॥1॥

(5-6)

ज्ञान चार अज्ञान तीन त्रय दर्शन और लब्धियाँ पाँच।
समकित चारित और संयमासंयम भाव क्षयोपशम जान।
गति कषाय लिंग चार चार त्रय मिथ्यादर्शन इक अज्ञान।
एक असंयम असिद्धत्व लेश्या छह उदयिक इक्किस मान॥2॥

(7-13)

भव्य अभव्य तथा जीवत्व भेद पारिणामिक के तीन।
दर्शन-ज्ञान जीव का लक्षण चार-आठ हैं भेद सही॥
संसारी अरु मुक्तजीव हैं संसारी मन सहित-अमन।
संसारी त्रस, थावर- भू जल अग्नि वनस्पति और पवन॥3॥

(14-19)

दो त्रय चार पांच इन्द्रिययुत त्रस हैं, इन्द्रिय होती पांच।
दो प्रकार की हैं, द्रव्येन्द्रिय, निर्वृत्ति और उपकरण सुजान।
लब्धि और उपयोग जानिये भावेन्द्रिय के भेद अहो।
पर्शन रसना घ्राण चक्षु अरु श्रोत्र पांच इन्द्रियाँ कहो॥4॥

(20-25)

फरस तथा रस गन्ध वर्ण अरु शब्द विषय हैं इन्द्रिय के।
श्रुत को विषय बनाता है मन थावर की हैं इन्द्रिय एक॥
एक-एक इन्द्रिय बढ़ती कृमि चींटी भँवरा मनुजों में।
संज्ञी हैं मन सहित और हो कर्म योग विग्रह गति में॥5॥

(26-31)

नभ प्रदेश श्रेणी में गति हो मुक्त जीव की सरल गति।
संसारी की वक्र, सरल भी, चार समय के पूर्व कही।
एक समय में सरल गति है इक दो त्रय तक अनहारी।
सम्मूर्छन अरु गर्भ तथा उपपाद जन्म लें संसारी॥6॥

(32-36)

शीत-सचित्त-ढँकी, अरु इनसे इतर, मिश्र नौ योनि कही।
अण्डज पोत जरायुज - ये सब जीव जन्मते गर्भ सहित।
सुर-नारक उपपाद जन्म लें सम्मूर्छन हैं शेष सभी।
औदारिक वैक्रिय आहारक तैजस अरु कार्माण शरीर ॥7॥

(37-43)

क्रमशः अधिक सूक्ष्म हैं सबतन, प्रदेश असंख्यगुणे तन तीन।
अन्तिम दो तन के प्रदेश अनन्त गुणे अप्रतिघाती ॥
हैं अनादि से ये दोनों तन सभी जीव के रहते संग।
कम से कम ये दो तन और अधिकतम चार रहें इक संग ॥8॥

(44-49)

निरुपभोग है अन्तिम तन गर्भज सम्मूर्छन को पहला।
उपपाद जन्म में वैक्रियतन, यह लब्धि विशेष से भी होता ॥
तैजस भी लब्धि से होता आहारक शुभ और विशुद्ध।
होता है प्रमत्त संयत मुनिवर को यह व्याघात रहित ॥9॥

हरिगीतिका

(50-53)

नारकी-सम्मूर्छन होते नपुंसक, सुर नहीं।
शेष सबको तीन लिंग हो सकें कहते जिन यही। ॥
औपपादिक, चरम-उत्तम तन, असंख्यों वर्ष की
हो आयु जिनकी उन्हें अपवर्तन नहीं होता कभी ॥10॥

****

अध्याय - 3

सूत्र क्रमांक

(1-2)

रत्न शर्करा बालु पंक अरु धूमप्रभा तम महाप्रभा।
घन अम्बु तनु वात वलय नीचे-नीचे भू सप्त कहा ॥
तीस पचीस पन्द्रह, एवं तीन लाख बिल पंचम तक।
छठवें में इक लाख पाँच कम, सप्तम में बिल पाँच निरख ॥1»

(1-6)

-नित्य अशुभतर लेश्या अरु परिणाम देह वेदना अहो।
तथा विक्रिया इनकी होती दुख दें एक दूसरे को ॥
तीजे तक इनको दुख देते असुर कुमार महासंक्लिष्ट।
एक तीन अरु सात तथा दस सत्रह अरु बाइस तेतीस ॥2»

(6-9)

-सागर नारकियों की आयु कही जिनागम में उत्कृष्ट।
मध्य लोक में जम्बू लवणोदधि शुभ नामी द्वीप समुद्र ॥
ये सब दूने दूने विस्तृत घेर रहे चूड़ीवत् जान।
एक लाख योजन का जम्बूद्वीप मध्य में मेरु महान ॥3॥

(10-11)

भरत हैमवत् हरि विदेह रम्यक हैरण्य-रु ऐरावत।
सात क्षेत्र जम्बू सुद्वीप में इन्हें बाँटते छह पर्वत॥
हिमवन तथा महाहिमवन गिरि निषध नील रुक्मि शिखरी।
पूरब से पश्चिम तक फैले हैं अनेक रंगों के गिरि॥4॥

(12-13)

स्वर्ण रजत अरु तपे हुए सोने जैसे रंगवाले तीन।
नीलमणि अरु चाँदी सोने जैसे रंग से शोभित तीन।
ऊपर नीचे और मध्य में है विस्तार एक जैसा,
सभी पर्वतों का तट चित्र-विचित्र सुशोभित मणियों का॥5॥

(14-17)

पद्म सरोवर महापद्म अरु तिगिच्छ केसरी महापुण्डरीक।
पुण्डरीक नामक छह सरवर से शोभित ये छहों गिरि॥
पद्म सरोवर एक सहस योजन लम्बा आधा चौड़ा।
दश योजन गहरा है उसके बीच कमल इक योजन का॥6॥

(18-19)

शेष सरोवर और कमल हैं दूने-दूने पिछले से।
श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि अरु लक्ष्मी देवी हैं इनमें॥
ये सामानिक और पारिषद देवों के संग रहती हैं।
मात्र एक पल्योपम आयु इनकी कही जिनागम में॥7॥

(20-22)

गंगा-सिन्धु रोहित-रोहितास्या हरित-हरिकान्ता।
सीता-सीतोदा नारी-नरकान्ता स्वर्ण-रूप्यकूला॥
रक्ता- रक्तोदा ये चौदह नदियाँ बहती सरवर से।
पहली बहती पूर्व दिशा में दूजी बहती पश्चिम में॥8॥

(23-25)

सहस चतुर्दश नदियों से हैं घिरी गंग-सिन्धु नदियाँ।
पाँच शतक छब्बिस योजन अरु उन्नीस में से भाग छठा-
भरत क्षेत्र का इतना है विस्तार वचन जिन आगम का।
क्षेत्र विदेह तक है विस्तार जानिये सब दूना-दूना॥9॥

(26-28)

उत्तर दक्षिण में विदेह के सबका है विस्तार समान।
भरतैरावत में होती है हानि-वृद्धि छह काल सुजान॥
अवसर्पिणि- उत्सर्पिणि कालों द्वारा होता परिवर्तन।
भरतैरावत के अतिरिक्त कहीं नहिं होता परिवर्तन॥10॥

(29-32)

हैमवतक हरि देवकुरु में इक द्वय त्रय पल्यों की आयु।
हैरण्यवतक रम्यक् उत्तर कुरु में भी इसी तरह की आयु॥
नर-तिर्यचों की विदेह में आयु वर्ष कही संख्यात।
इक शत नब्बे भाग द्वीप जम्बू का भरतक्षेत्र विस्तार॥11॥

(33-36)

खण्ड धातकी में सब रचनायें जम्बू से दूनी हैं ।
पुष्करार्ध में भी सारी रचना जम्बू से दूनी हैं ॥
मानुषोत्तर के पहले तक ही मानव हो सकते हैं ।
आर्य-म्लेच्छ- इन दो रूपों में मनुजों के दो भेद कहे ॥12॥

(37-39)

भरतैरावत अरु विदेह में कर्मभूमि पन्द्रह मानो ।
देवकुरु-उत्तरकुरु में नहिं कर्मभूमि होती जानो ॥ ।
मनुजों की उत्कृष्ट पल्यत्रय आयु जघन अन्तर्मुहुरत ।
तिर्यचों की भी आयु इतनी ही होती मानववत् ॥13॥

****

अध्याय - 4

सूत्र क्रमांक

(1-3)

भवनवासि व्यन्तर ज्योतिष अरु कल्पवासि सुर चार प्रकार ।
भवनत्रिक में कृष्ण नील कापोत पीत लेश्यायें चार ॥
कल्पोपन्न देव तक चारों के दश आठ पाँच बारह ।
सभी निकायों के देवों के होते हैं दश भेद प्रवर ॥1॥

(4-5)

इन्द्र तथा सामानिक त्रायस्त्रिंश अरु भेद पारिषद हैं ।
आत्मरक्ष अरु लोकपाल आनीक प्रकीर्णक भेद कहें ॥
आभियोग्य अरु किल्विष ये दश भेद सभी हैं देवों में ।
त्रायस्त्रिंश अरु लोकपाल नहिं होते व्यन्तर ज्योतिष में ॥2॥

(6-9)

भवनवासि व्यन्तर में दो दो इन्द्र कहे जिन आगम में ।
काया से हो काम-क्रिया ईशान स्वर्ग तक देवों में ॥
शेष सुरों में स्पर्श रूप अरु शब्द तथा मन से होता ।
सोलह स्वर्गो से ऊपर नहिं काम भाव सुर में होता ॥3॥

(10-11)

भवनवासि में असुर-नाग-विद्युत-सुपर्ण अरु अग्निकुमार ।
वात-स्तनित-रु उदधि, द्वीप मिल दिक्कुमार दश भेद विचार ॥
किन्नर अरु किं पुरुष महोरग हैं गंधर्व यक्ष राक्षस ।
भूत पिशाच मिलाकर आठ प्रकार जानिये सब व्यन्तर ॥4॥

(12-17)

सूर्य चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णक ज्योतिष देव कहे ।
सदा मेरु की प्रदक्षिणा कर मध्य लोक में गमन करें ।
इनसे काल भेद है, ढाई द्वीप परे सब हैं स्थिर ।
वैमानिक के भेद लखो कल्पोपन्न अरु कल्पातीत ॥5॥

(18-19)

ऊपर-ऊपर स्वर्गलोक सौधर्मेशान कुमार-सनत्।
माहेन्द्र ब्रह्म बह्मोत्तर लान्तव कापिष्ठ शुक्र अरु महाशुक्र ॥
शतार सहस्रार आनत प्राणत आरण अच्युत शुभ नाम।
नव ग्रैवेयक नव अनुदिश पर पाँच अनुतर कहें विमान ॥6॥

(20-22)

विजय वैजयन्त-रु जयन्त अपराजित अरु सर्वार्थसिद्धि।
स्थिति प्रभाव द्युति लेश्या ज्ञान-विषय विशुद्धि अधिक होती ॥
गति शरीर परिग्रह अभिमान कहे हैं ऊपर-ऊपर हीन।
दो युगलों में पीत तीन में पद्म शेष में शुक्ल कही ॥7॥

(23-26)

कल्प कहें सोलह स्वर्गों को ऊपर के हैं कल्पातीत।
ब्रह्म लोक में लौकान्तिक के आठ भेद सारस्वत आदित्य-
वन्हि अरुण अरु गर्दतोय हैं तूषित अव्याबाध अरिष्ट
विजयादिक के दो अन्तिमभव मात्र एक सर्वार्थ सिद्धि ॥8॥

(27-29)

देव नारकी और मनुष्यों के अतिरिक्त सभी तिर्यच।
असुरकुमार एक सागर थिति नागकुमार आयु त्रय पल्य ॥
ढाई अरु दो पल्य सुपर्ण-द्वीप की शेष सभी की डेढ़।
सौधर्म और ईशान स्वर्ग में दो सागर कुछ अधिक कहें ॥9॥

(30-32)

सनतकुमार महेन्द्र स्वर्ग में सप्तोदधि कुछ अधिक थिति।
तीन सात नव ग्यारह तेरह पन्द्रह अधिक शेष की थिति ॥
नव ग्रैवेयक नव अनुदिश विजयादिक पाँच विमानों में।
एक-एक सागर बढ़ती है आयु कल्पातीतों में ॥10॥

(33-38)

सौधर्म और ईशान स्वर्ग में एक पल्य कुछ अधिक जघन्य।
जो पहले की है उत्कृष्ट वही आगे की आयु जघन्य ॥
द्वितियादिक नरकों में जो उत्कृष्ट जघन आगामी की।
वर्ष सहस दस प्रथम नरक की भवनवासि अरु व्यन्तर की ॥11॥

(39-42)

इक पल्योपम से कुछ ज्यादा व्यन्तर ज्योतिष की उत्कृष्ट-
पल्योपम का भाग आठवाँ ज्योतिष की ही आयु जघन ॥
सब लौकान्तिक देवों की है आयु जघन एवं उत्कृष्ट।
सागर आठ जानिये यह सब जिन आगम के वचन प्रकृष्ट ॥12॥

****

अध्याय - 5

सूत्र क्रमांक

(1-8)

धर्म अधर्म आकाश और पुद्गल अजीव हैं द्रव्य कहे।
अधिक प्रदेशी द्रव्य जीव भी नित्य अवस्थित द्रव्य कहे॥
पुद्गल रूपी शेष अरूपी एक-एक हैं नभ पर्यन्त।
निष्क्रिय, धर्माधर्म जीव के हैं प्रदेश जानिये असंख्य॥1॥

(9-14)

है आकाश अनन्त प्रदेशी संख्यासंख्य अनन्त पुद्गल।
परमाणु है एक प्रदेशी लोकाकाश रहें सब द्रव्य॥
धर्म-अधर्म समस्त लोक में व्याप्त तिलों में तेल समान।
पुद्गल एक तथा संख्यात असंख्य प्रदेश विभाग सुजान॥2॥

(15-18)

जीवों का अवगाह लोक में, असंख्यातवें भाग प्रमाण।
हो संकोच तथा विस्तार प्रदेशों में दीपकवत् जान॥
गति स्थिति जीव-रु पुद्गल की क्रमशः धर्म-अधर्म उपकार।
सब द्रव्यों को अवगाहन दे यह उपकार करे आकाश॥3॥

(19-22)

तन मन वाणी श्वासोच्छ्वास रचे जाते हैं पुद्गल से।
इन्द्रिय सुख दुख जन्म मरण में भी पुद्गल निमित्त होते॥
एक दूसरे का आपस में करते जीव द्रव्य उपकार।
वर्तन किया और परिणाम परत्वापरत्व काल उपकार॥4॥

(23-28)

स्पर्श-गन्ध-रस-वर्णमयी अरु शब्द बन्ध सूक्ष्म स्थूल-
संस्थान भेद तम छाया आतप अरु उद्योतवन्त पुद्गल॥
अणु एवं स्कन्ध, भेद-संघात तथा हों दोनों से।
अणु भेद से एवं चक्षुगम्य स्कंध हो दोनों से॥5॥

(29-35)

सत् लक्षण है द्रव्य तथा सत् व्यय-उत्पाद-ध्रौव्य संयुक्त।
निज भावों के अव्यय होने को ही जिन कहते हैं नित्य॥
मुख्य-गौण से सिद्धि होती, बन्ध स्निग्धता रूक्षपने।
नहिं जघन्यगुण से एवं गुण हों समान तो नहीं बँधे॥6॥

(36-42)

यदि दो गुण हों अधिक तभी बँधते है आपस में पुद्गल।
ज्यादा गुण वाले कर लेते कम गुण वाले को निज सम॥
गुण-पर्यायों युक्त द्रव्य है काल अनन्त समययुत द्रव्य।
गुण द्रव्याश्रित निर्गुण जानो भाव द्रव्य का है परिणाम॥7॥

****

अध्याय - 6

सूत्र क्रमांक

(1-5)

मन-वच-तन की क्रिया योग है उसको आस्रव कहते हैं।
शुभ से पुण्य अशुभ से पाप कर्म आस्रव नित होते हैं॥
सकषायी को साम्परायिक अकषायी को ईर्यापथ है।
इन्द्रिय कषाय अव्रत अरु क्रिया भेदरूप साम्प्रायिक है॥1»

(5-7)

-पाँच चार अरु पाँच तथा पच्चीस भेद क्रमशः इनके।
तीव्र मन्द अज्ञात ज्ञात भावाधिकरण अरु वीर्य विशेष-
होते हैं तो इस निमित्त से कर्मास्रव भी होय विशेष।
आस्रव के आधार जीव एवं अजीव दोनों होते॥2॥

(8-9)

पहला है आरम्भ तथा संरम्भ समारम्भ त्रय योग।
कृत कारित अनुमोदन चार कषाय रूप शत आठ कहो॥
निर्वतन द्वय चौ निक्षेप द्वय संयोग निसर्गत्रय।
ये अजीव-अधिकरण भेद ग्यारह कहते हैं श्री जिनवर॥3॥

(10-11)

दर्श-ज्ञान में दोष तथा निन्हव मात्सर्य और अन्तराय।
आसादन-उपघात भाव से ज्ञान-दर्शनावरणास्रव॥
दुःख शोक तापाक्रन्दन वध एवं ऐसा करे रुदन।
जिससे करुणा हो अन्यों को होय असाता प्रकृति बन्ध॥4॥

(12-14)

जीवों व्रतियों में अनुकम्पा दान तथा संयमयुत राग।
क्रोध-मान-माया-निवृत्ति अरु शौच भाव से सातास्रव॥
केवलि संघ धर्म श्रुत देव अवर्णवाद से दर्शनमोह।
हो कषाय का तीव्र उदय इन परिणामों से चारित मोह॥5॥

(15-19)

बहु आरम्भ परिग्रह से नरकायु का होता आस्रव।
माया से तिर्यच, अल्प आरम्भ परिग्रह से नरभव॥
मृदु स्वभाव से भी नर होते सुरगति में भी जाते हैं।
शील व्रतों से रहित जीव चारों गतियों में जाते हैं॥6॥

(20-23)

यदि सराग संयम हो एवं संयम सहित असंयम भाव।
हो अकाम निर्जरा बालतप समकित से भी देवास्रव॥
योग वक्रता, विसंवाद से अशुभनाम कर्मास्रव हो।
इनसे हो विपरीत भाव तो नाम कर्म शुभ आस्रव हो॥7॥

(24)

दर्श विशुद्धि विनय सम्पन्न शीलव्रत में अतिचार न हो-
हो अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग संवेग शक्तितः त्याग कहो-
तप भी, साधु समाधि और वैयावृत्ति अर्हत् भक्ति-
आचार्यो बहुश्रुत प्रवचन में भक्ति और आवश्यक भी॥8»

(24-25)

-जिनशासन की हो प्रभावना अरु प्रवचन वात्सल्य रखे।
सोलह भावों से तीर्थंकर प्रकृति नाम का कर्म बँधे ॥
परनिन्दा अरु आत्मप्रशंसा सत्गुण का जो लोप करे।
असद्गुणों को प्रगटावे तो नीच गोत्र की प्रकृति बँधे ॥9॥

हरिगीत (26-27)

उपरोक्त भावों से विपर्यय आत्म निन्दादिक करे।
तो उच्च गोत्र-रु विघ्न करने से प्रकृति अन्तराय हो ॥

****

अध्याय - 7

(1-4)

हिंसा अनृत अरु चोरी अब्रह्म परिग्रह का हो त्याग।
व्रत कहलाते हैं ये अणुव्रत और महाव्रत भेद कहा ॥
उनमें थिरता हेतु भावना पाँच पाँच होती सबकी।
मन-वच गुप्ति, समिति ईर्या, आलोकित अशन अहिंसा की ॥1॥

(5-7)

क्रोध-लोभ-भय-हास्य वचन नहिं कहे, वचन निर्दोष कहे।
दूजे व्रत में; शून्य त्यक्त आवास अन्य अवरोध तजे-
भिक्षा- शुद्धि साधर्मी से अविसंवाद तीसरे की।
नारी-राग कथा सुनना अरु अंग निरखने का त्यागी- ॥2॥

(7-10)

पूर्व भोग स्मरण करे नहिं, इष्ट रसों का त्याग करे।
तन का भी संस्कार करे नहिं, ब्रह्मचर्य भावना कहें।
पंचेन्द्रिय विषयों में राग न द्वेष न हो अपरिग्रह की।
पापों से हो उभय लोक में भय निन्दा एवं दुःख भी ॥3॥

(11-13)

मैत्री भाव सभी जीवों में गुणी जनों में होय प्रमोद।
दुखियों के प्रति करुणा एवं दुर्जन में मध्यस्थ रहो।
संवेग और वैराग्य हेतु जग-तन स्वभाव का हो चिन्तन।
हिंसा होती है प्रमादवश करे प्राण का व्यपरोपण ॥4॥

(14-20)

असत् कथन में झूठ पाप अरु ग्रहण अदत्त कहें चोरी।
मैथुन किया अब्रह्म तथा मूर्च्छा का भाव परिग्रह ही ॥
व्रती रहें निःशल्य, भेद द्वय आगारी अरु अनगारी।
पाँच पाप के त्यागी अणुव्रतधारी होते आगारी ॥5॥

(21-23)

दिग्व्रत देश अनर्थदण्ड व्रत सामायिक प्रोषध उपवास।
सीमित हों भोगोपभोग अरु अतिथि विभाग कहे व्रत सात।
मरण समय में समता पूर्वक श्रावक सल्लेखना गहो।
जिनवच में शंका, भोगों की आकाँक्षा, विचिकित्सा हो ॥6»

(23-25)

-अन्य दृष्टि की करे प्रशंसा-स्तुति समकित के अतिचार।
अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रत के होते पाँच पाँच अतिचार॥
वध बन्धन छेदन जीवों का और रखे उन पर अतिभार।
अन्न-पान नहिं देवे उनको पाँच अहिंसा व्रत अतिचार॥7॥

(26-27)

दे मिथ्या उपदेश, गुप्त को करे प्रगट, झूठा लिखना।
रखी अमानत को हड़पे, साकार मन्त्र, सत् का अतिचार॥
चौर्य कर्म की करे प्रेरणा चौर्य वस्तुओं का आदान।
राज्य विरुद्ध-रु प्रतिरूपक हीनाधिक वस्तु दान-आदान॥8॥

(28-29)

अन्य विवाह कराना, परनारी-विधवा-त्यक्ता का संग।
रमे अन्य अंगों से अतिकामुकता करे ब्रह्मचर्य भंग॥
खेत मकान स्वर्ण चाँदी धन-धान्य तथा दासी अरु दास।
वस्त्रादिक परिग्रह की सीमा का उल्लंघन है अतिचार॥9॥

(30-31)

ऊपर नीचे तिर्यक् दिशि में सीमा का हो उल्लंघन।
क्षेत्र वृद्धि अरु सीमा विस्मृति अतीचार दिग्व्रत के पन्च।
सीमा के बाहर से वस्तु मँगाना, सेवक को भेजें।
शब्द-रूप से करे इशारा, पुद्गल क्षेपण जानो पन्च॥10॥

(32-33)

हँसी मजाक अश्लील चेष्टा बहुत बोलना सोचे व्यर्थ।
व्यर्थ वचन अरु क्रिया, कीमती वस्तु रखे ये पाँच अनर्थ॥
मन-वच-तन की अनुचित वृत्ति सामायिक में नहिं उत्साह।
पाठ भूलना ये पाँचों हैं सामायिक व्रत के अतिचार॥11॥

(34-35)

देखे शोधे बिना उठाना धरना शैया पर सोना।
धर्म कार्य में रखे अनादर विस्मृति प्रोषध के अतिचार॥
वस्तु सचित्त तथा सम्बन्धित मिश्रित या कामोत्तेजक।
जला अधपका खाना, ये परिमाण-भोग के हैं अतिचार॥12॥

(36-37)

सचित पात्र में रखे सचित से ढके अन्य द्वारा देना।
करे अनादर समय टाल दे अतिथि-भाग व्रत के अतिचार॥
जीने-मरने की वान्छा एवं मित्रों से हो अनुराग।
पूर्व भोग स्मृति, निदान, ये सल्लेखन व्रत के अतिचार॥13॥

हरिगीतिका

(38-39)

निज वस्तुओं को स्व-पर अनुग्रह हेतु देना दान है।
विधि द्रव्य दाता पात्र से हों विशेषतायें दान में॥14॥

अध्याय - 8

(1-4)

मिथ्यादर्शन अविरति और प्रमाद कषाय योग से बन्ध।
सकषायी होने से कर्म योग्य पुद्गल का आना बन्ध॥
प्रकृति स्थिति एवं अनुभाग प्रदेश, बन्ध के चार प्रकार।
ज्ञानदर्शनावरण वेदनी मोहनीय की प्रकृति चार॥1॥

(4-6)

-पुनः आयु अरु नाम गोत्र फिर अन्तराय भी मिलकर आठ।
पाँच तथा नव दो अट्ठाइस चार ब्यालिस दो अरु पाँच॥
क्रमशः सभी प्रकृतियों के भेदों की यह संख्या जानो।
ज्ञानावरणी मति श्रुत अवधि मनपर्यय केवल मानो॥2॥

(7-9)

चक्षु अचक्षु अवधि केवल निद्रा निद्रानिद्रा प्रचला।
प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्ध ये दर्शनावरणी भेद कहा॥
साता और असाता दो हैं वेदनीय के भेद कहो।
दर्शन अरु चारित्र मोहनी मोह प्रकृति के भेद लखो॥3॥

(9)

समकित अरु मिथ्यात्व मिश्र ये तीनों दर्शनमोह प्रकृति।
हास्य अरति रति शोक भीति अरु घृणा नपुंसक नर-नारी-
नौ प्रकार अकषाय वेदनी सोलह भेद कषाय कही।
अनन्तानुबन्धी अप्रत्याख्यानी अरु प्रत्याख्यानी॥4॥

(9-11)

पुनः सन्ज्वलन भेदरूप हैं क्रोध मान अरु माया लोभ।
नारक तिर्यक् नर सुर चारों आयु कर्म के भेद लखो॥
गति जाति तन अंगोपांग और निर्माण तथा बन्धन।
संघात और संस्थान संहनन फरुस गन्ध रस एवं वर्ण॥5॥

(11)

-आनुपूर्वी अगरुलघु उपघात तथा परघात लखो।
आतप अरु उद्योत तथा उच्छ्वास विहायोगति जानो॥
प्रत्येक देह साधारण त्रस थावर अरु सुभग और दुर्भग।
सुस्वर दुस्वर सूक्ष्म स्थूल शुभाशुभ प्रकृति नाम की लख॥6॥

(11-13)

-पर्याप्ति अरु अपर्याप्ति स्थिर अस्थिर आदेय कही।
अनादेय यश-अयश कीर्ति अरु तीर्थंकर भी प्रकृति लखी॥
ऊँच नीच है गोत्र तथा अब पाँच प्रकार लखो अन्तराय।
दान लाभ अरु भोग तथा उपभोग वीर्य ये भेद बताय॥7॥

(14-20)

प्रथम तीन अरु अन्तराय- उत्कृष्ट आयु है सागर तीस-
कोड़ाकोड़ी, मोहनीय की सत्तर, गोत्र-नाम की बीस॥
आयु की तेतीस वेदनी कम से कम मुहुर्त बारह।
नाम-गोत्र की आठ मुहुर्त-रु शेष सभी मुहूर्त अन्तर॥8॥

(21-24)

कर्मो का विपाक अनुभव होता उनके नामों अनुसार।
फल देकर उन कर्म प्रकृतियों की निर्जरा कही सविपाक।
योगों की विशेषता से आत्मा के सर्व प्रदेशों में।
सूक्ष्म अनन्तानन्त अणु इक क्षेत्रवगाही होते हैं ॥9॥

हरिगीत (25-26)

वेदनी साता तथा शुभ आयु नाम-रु गोत्र की।
प्रकृतियाँ हैं पुण्य इनके अलावा सब पाप ही ॥10॥

अध्याय-9

सूत्र क्रमांक (1-4)

आश्रव का निरोध संवर है गुप्ति समिति अरु धर्म कहो।
अनुप्रेक्षा परिषह जय एवं चारित मिल छह भेद लखो ॥
तप से संवर और निर्जरा, सम्यक् योग निरोध गुप्ति।
ईर्या भाषा निक्षेपण-आदान एषणा समिति कही ॥1»

(4-7)

-पंचम है उत्सर्ग समिति अरु कहे धर्म के दश लक्षण।
उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव सत्य शौच अरु तप संयम -
त्याग और आकिन्चन एवं ब्रह्मचर्य को धर्म कहो।
अनुप्रेक्षा बारह अनित्य अशरण संसारैकत्व लखो ॥2»

(7-8)

-अन्यत्व अशुचि आश्रव संवर निर्जरा लोक बोधि दुर्लभ।
तथा धर्म का चिन्तन अनुप्रेक्षा है जिससे मुक्ति सुलभ ॥
संवर पथ पर रहे अडिगता और कर्म क्षय हेतु कहे।
सहने योग्य परीषह बाइस जंगल में मुनिराज सहें ॥3॥

(9)

क्षुधा तृषा शीतोष्ण दंशमशक नाग्न्य अरति स्त्री चर्या-
निषद्या शैयाक्रोश याचना वध अलाभ अरु रोग कहा-
तृणस्पर्श सत्कार तथा मल पुरस्कार प्रज्ञा अज्ञान-
और अदर्शन मिल सब होते हैं बाईस परीषह जान ॥4॥

(10-14)

दसवें अरु बारहवें गुणस्थान में हों चौदह परिषह।
तेरहवें में ग्यारह एवं छह से नौ तक सब परिषह ॥
प्रज्ञा अरु अज्ञान परीषह ज्ञानावरण निमित्त से हों।
दर्श-मोह से होय अदर्शन अन्तराय से लाभ न हो ॥5॥

(15-18)

नाग्न्य अरति स्त्री निषद्या अरु आक्रोश याचना भी।
होते हैं सत्कार पुरस्कार चारित मोह उदय में ही ॥
शेष सभी वेदनी उदय से, एक साथ होते उन्नीस।
सामायिक छेदोपस्थापन अरु परिहार विशुद्धि भी ॥6»

(18-20)

-सूक्ष्मसाम्पराय-रु यथाख्यात पाँच चारित्र सही।
अनशन अवमौदर्य और वृत्ति परिसंख्या रस त्यागी -
विविक्त शय्यासन अरु कायाक्लेश बाह्य तप, अरु अन्तरंग-
प्रायश्चित विनय वैयावृत स्वाध्याय व्युत्सर्ग सुध्यान ॥7॥

(21-23)

ध्यान पूर्व नौ चार और दश पाँच तथा दो भेद कहे।
प्रायश्चित के आलोचन प्रतिक्रमण और तदुभय कहते-
विवेक तथा व्युत्सर्ग छेद तप परिहारोपस्थापन है।
ज्ञान दर्श चारित्र और उपचार विनय के भेद कहे ॥8॥

(24-26)

आचार्योपाध्याय तपस्वी शैक्ष्य ग्लान गण कुल अरु संघ-
साधु मनोज्ञ - इन दश प्रकार के मुनि सेवा वैयावृत्त अंग ॥
वाचन पृच्छा अनुप्रेक्षा आम्नाय सुनाना है स्वाध्याय।
बाह्याभ्यन्तर उपधि त्याग- यह दो प्रकार व्युत्सर्ग कहा ॥9॥

(27-30)

अन्तर्मुहुर्त होकर एकाग्र करे चिन्ताओं का परिहार।
उत्तम संहनन युक्त जीव जब होता उसे ध्यान तप सार ॥
आर्त रौद्र अरु धर्म शुक्ल चौ भेद अन्तद्वय हैं शिवपंथ
हो अनिष्ट संयोग दूर करने का चिन्तन आर्त प्रथम ॥10॥

(31-35)

इष्ट प्राप्ति का चिन्तन दूजा वेदन निग्रह तीजा आर्त।
चौथा है निदान, हो अविरति देशविरत प्रमत्त तक आर्त ॥
हिंसा अनृत अरु स्तेय विषय संरक्षण रौद्र कहा।
अविरत चारों, देशविरत को रौद्र ध्यान है हो सकता ॥11॥

(36-39)

आज्ञा और अपाय विपाक विचय संस्थान धर्म चौ ध्यान।
पूर्वज्ञानधर को होते हैं प्रथम द्वितीय भेद शुक्ल ध्यान ॥
अन्तिम दो केवलि को होते चार भेद जानो यह ध्यान।
पृथक्त्व और एकत्व वितर्क, सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति सुध्यान ॥12॥

(39-42)

व्युपरत क्रिया निवृत्ति चतुर्थम पहला तीनों योग सहित-
किसी एक योगी को दूजा- तीजा काया योग सहित ॥
चौथा ध्यान अयोगी को है पहले दो सवितर्क विचार-
पूर्व ज्ञानधारी को होते, दूजे में हों नहीं विचार ॥13॥

(43-45)

श्रुत वितर्क है व्यन्जन अर्थ-रु योगों की संक्रान्ति विचार।
गुण असंख्य निर्जरा कही है इन सबकी क्रमशः अनिवार-
सम्यग्दृष्टि श्रावक विरतानन्त-वियोजक मोह क्षपक।
चरितमोह उपशामक अरु उपशान्तमोहयुत तथा क्षपक ॥14»

(45-47)

-क्षीण मोह एवं जिनेन्द्र क्रम से करते निर्जरा महान।
पुलाक बकुश कुशील और निर्ग्रन्थ स्नातक मुनि भगवान॥
संयम श्रुत प्रतिसेवन तीर्थ लिंग लेश्या उपपाद स्थान।
इन आठों अनुयोगों से हो पाँचों मुनि में भेद सुजान॥15॥

अध्याय-10

सूत्र क्रमांक

(1-4)

मोहक्षय एवं त्रिघाति के क्षय से होता केवलज्ञान।
संवर और निर्जरा से सम्पूर्ण कर्मक्षय है निर्वाण॥
उपशम उदय क्षयोपशम भाव तथा भव्यत्व नष्ट होते।
क्षायिक समकित दर्शन ज्ञान और सिद्धत्व सदा रहते॥1॥

(5-7)

कर्मक्षय होने पर ऊपर जीव गमन करता लोकान्त।
पूर्व प्रयोग असंग बन्ध का छेद स्वभावी-ऊर्ध्वगमन॥
ज्यों कुम्हार का चक्र घूमता तूँबी से मिट्टी हटती।
एरण्ड बीज ऊपर जाता अरु अग्नि शिखा ऊपर जाती॥2॥

(8-9)

नहिं अलोक में धर्मद्रव्य है अतः जीव रहता लोकाग्र।
क्षेत्र काल गति लिंग तीर्थ चारित्र और बोधित प्रत्येक-
बोधित बुद्ध ज्ञान अवगाहन अन्तर संख्या अल्प बहुत्व-
इन बारह बिन्दु के द्वारा सिद्ध जीव हो सकें विभक्त॥3॥

****

(दोहा)

जिन गुरु जिनश्रुत भक्ति से प्रेरित यह अनुवाद।
पढ़ें सुनें भविजन सदा पावें निजपद राज॥
भाव-द्रव्य की दृष्टि से यदि हो कोई भूल।
पंच प्रभु कर दे क्षमा, शीघ्र लहूँ भव-कूल-॥

****